

गीत भी, अगीत भी

नीरज

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली



प्रथम संस्करण १९६३

मूल्य
दो रुपये

प्रकाशक
मुद्रक

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली
भारत मुद्रणालय, साहूदरा, दिल्ली

श्री श्रेयास प्रसाद जो

को

जिनसे मुझे सदा ही

सच्चे मित्र का स्नेह और बड़े भाई का प्यार

मिलता रहा है

कलम तोड़ते बचपन बीता,
पाती लिसते गईं जवानो;
लेकिन पूरी हुई न अब तक,
दो आखर की प्रेम कहानी ।

अनुक्रमणिका

गीत	६
सारा जग बजारा होता	१२
मैं पीड़ा का गजकुंवर हूँ	१५
मारा जग मधुवा लगता है	१७
उनकी याद हम आती है	१६
खिड़की बंद कर दो	२१
अब सहा जाता नहीं	२३
तुम हा नहीं मिले जीवन मे	२५
बिन धागे की सुई जिन्दगी	२७
जीवन नहीं भरा करता है	२९
सारा बाग नजर आता है	३१
रोती गागर का क्या हागा	३३
माँ ! जल भरन न जाऊँ	३६
मा ! मत ऐसे टर	३९
माँ ! अब गोद सुला ले	४२
मा ! मत हा नाराज	४५
मात्र परछाई हूँ	४८
खिड़की खुली	४९

माती हूँ मैं	५०
द्वैताद्वैत	५२
पायदान	५३
हरिण और भृगजल	५४
धनी और निधन	५७
नया हिसाब	५६
एक विचार	६१
अजलि	६२
गीत	६३
गीत	६५
गीत	६७
पतझर घर तक आ पहुँचा है	६६
सम्पूर्ण भारत की आत्मा एक है	७२
सैनिकों का प्रयाण-गीत	७५
फूल बाग और गुलदस्ता	७६
गीत	८३
बशरम समय शरमा ही जाएगा	८६
मुक्तक	८८
आदम का लहू	९२
प्यार बिना कबौरी हर बहुरिया	९४
गीत	९७
ऐसी रात नहीं आती है	१००-
हमारो रँग नेमरिया	१०२

गीत भी, अगीत भी

गीत

विश्व चाहे या न चाहे,
लोग समझें या न समझें,
आ गए हैं हम यहाँ तो गीत गाकर ही उठेंगे ।

हर नज़र गमगीन है, हर होठ ने धूनी रमाई,
हर गली वीरान जैसे हो कि बेवा की कलाई,
खुदकुशी कर भर रही है रोशनी तब आँगनों में
कर रहा है आदमी जब चाद तारों पर चढ़ाई,
फिर दियो का दम न टूटे,
फिर किरन को तम न लूटे,
हम जले हैं तो धरा को जगमगा कर ही उठेंगे ।
विश्व चाहे या न चाहे

हम नहीं उनमें हवा के साथ जिनका साज बदले,
साज ही केवल नहीं अदाज श्री' आवाज बदले
उन फकीरो-सिरफिरो के हमसफर हम, हमउमर हम,
जो बदल जाएँ अगर तो तख्त बदले ताज बदले,

तुम सभी कुछ काम कर लो,
हर तरह बदनाम कर लो,
हम कहानी प्यार की पूरी सुनाकर ही उठेंगे ।
विश्व चाहे या न चाहे

नाम जिसका आक गोरी हो गई मैली सियाही,
दे रहा है चाँद जिसके रूप की रोककर गवाही,
थाम जिसका हाथ चलना सीखती आँधी धरा पर
है खड़ा इतिहास जिसके द्वार पर बनकर सिपाही,
आदमी वह फिर न टूटे,
वक्त फिर उसको न लूटे,
जिन्दगी की हम नई सूरत बनाकर ही उठेंगे ।
विश्व चाहे या न चाहे

हम न अपने-आप ही आए दुखों के इस नगर में,
या मिला तेरा निमन्त्रण ही हमें आधे सफर में,
किन्तु फिर भी लौट जाते हम बिना गाए यहाँ से,
जो सभी को तू बराबर तोलता अपनी नज़र में,
अब भले कुछ भी वहे तू,
खुश कि या नाखुश रहे तू,
गाँव-भर को हम सही हालत बताकर ही उठेंगे ।
विश्व चाहे या न चाहे

इस सभा की साजिशो से तग आकर, चोट खाकर
 गीत गाए ही बिना जो हैं गए वापिस मुसाफिर
 और वे जो हाथ मे मिजराब पहने मुशकिलो की
 दे रहे हैं जिन्दगी के साज को सबसे नया स्वर,
 और तुम लाओ न लाओ,
 नेग तुम पाओ न पाओ,
 हम उन्हें इस दौर का दूल्हा बनाकर ही उठेंगे ।
 विश्व चाहे या न चाहे

सारा जग बजारा होता

प्यार अगर थामता न पथ मे उँगली इस बीमार उमर की
हर पीड़ा बेश्या बन जाती हर आँसू आवारा होता ।
निरवशी रहता उजियाला
गोद न भरती किसी किरन की,
और जिन्दगी लगती जैसे—
डोली कोई बिना दुल्हन की,
दुख से सब वस्ती कराहती, लपटो मे हर फूल भुलसता
करुणा ने जाकर नफरत का आँगन गर न बुहारा होता ।
प्यार अगर -

मन तो मौसम सा चंचल है
सबका होकर भी न किसी का
अभी सुबह का, अभी शाम का
अभी रुदन का, अभी हँसी का
और इसी भौरे की गलती क्षमा न यदि ममता कर देती
ईश्वर तक अपराधी होता पूरा खेल दुवारा होता ।
प्यार अगर

जीवन क्या है एक बात जो
 इतनी सिर्फ समझ में आए—
 कहे इसे वह भी पछताए
 सुने इसे वह भी पछताए
 मगर यही अनबूझ पहिली शिशु सी सरल महज बन जाती
 अगर तर्क को छोड़ भावना के संग किया गुजारा होता ।
 प्यार अगर

मेघदूत रचती न जिन्दगी
 वनवासिन होती हर सीता
 सुन्दरता ककड़ी माँख की
 और व्यथ लगती सब गीता
 पण्डित की आज्ञा ठुकराकर, सकल स्वर्ग पर धूल उडाकर
 अगर आदमी ने न भोग का पूजन-पात्र जुठारा होता ।
 प्यार अगर

जाने कैसा अजब शहर यह
 कैसा अजब मुसाफिरखाना
 भीतर से लगता पहचाना
 बाहर से दिखता अनजाना
 जब भी यहाँ ठहरने आता, एक प्रश्न उठता है मन में
 कैसा होता विश्व कही यदि कोई नहीं किवारा होता ।
 प्यार अगर

हर घर आगन रगमच है
 श्री' हर एक साँस कठपुतली,
 प्यार सिर्फ वह डोर कि जिसपर
 नाचे वादल, नाचे बिजली,
 तुम चाहे बिश्वास न लामो, लेकिन मैं तो यही कहूँगा
 प्यार न होता धरती पर तो सारा जग बजारा होता ।
 प्यार भगर

मैं पीडा का राजकुँवर हूँ

मैं पीडा का राजकुँवर हूँ, तुम शहजादी रूपनगर की
हो भी गया प्यार हम मे तो बोलो मिलन कहाँ पर होगा?

मीलो जहाँ न पता खुशी का

मैं उस आगन का इकलौता,

तुम उस घर की कली जहाँ नित

होठ करे गीतो का न्योता,

मेरी उमर अमावस काली और तुम्हारी पूनम गोरी
मिल भी गई राशि अपनी तो बोलो लगन कहाँ पर होगा?

मैं पीडा का

मेरा कुर्ता सिला दुखो ने

बदनामी ने काज निवाले

तुम जो आँचल ओढे उसमे

नभ ने सब तारे जड डाले

मैं केवल पानी ही पानी तुम केवल मदिरा ही मदिरा
मिट भी गया भेद तन का तो मन का हवन कहाँ पर होगा?

मैं पीडा का

मैं जन्मा इसलिए कि थोड़ी
 उम्र आसुओं की उठ जाए
 तुम आई इस हेतु कि मेहदी
 रोज नये कगा जडवाए,
 तुम उदयाचल, मैं अस्ताचल, तुम मुखान्त की, मैं दुखान्त की
 जुड़ भी गए अब अपने तो रस-अवतरण कहीं पर होगा ?
 मैं पीड़ा का

इतना दानी नहीं समय जो
 हर गमले में फूल खिला दे,
 इतनी भावुक नहीं जिंदगी
 हर खत का उत्तर भिजवा दे,
 मिलना अपना सरल नहीं है फिर भी यह सोचा करता हूँ
 जब न आदमी प्यार करेगा जाने भुवन कहा पर होगा ?
 मैं पीड़ा का

सारा जग मधुवन लगता है

दो गुलाब के फूल छू गए जब से होठ अपावन मेरे
ऐसी गंध बसी है मन में सारा जग मधुवन लगता है ।

रोम-रोम में खिले चमेली
साँस-साँस में मँहके बेला,
पोर-पोर से भरे मालती
अँग-अँग जुड़े जुही का मेला

पग पग लहरे मानसरोवर, डगर-डगर छाया कदब की
तुम जब से मिल गए उमर का खँडहर राजभवन लगता है ।
दो गुलाब के फूल

छिन छिन ऐसी लगे कि कोई
बिना रंग के खेले होली,
यूँ मदमाए प्राण कि जसे
नई बहू की चदन डोली

जेठ लगे सावन मनभावन और दुपहरी साँझ बसती
ऐसा मौसम फिरा धूल का ढेला एक रतन लाता है ।
दो गुलाब के फूल

जाने क्या हो गया कि हरदम
 बिना दिये के रहे उजाला,
 चमके टाट बिछावन जैसे
 तारो वाला नील दुशाला
 हस्तामलक हुए सुख सारे दुख के ऐसे ढहे कगारे
 व्यग्य-वचन लगता था जो कल वह अब अभिनन्दन लगता है।
 दो गुलाब के फूल

तुम्हे चूमने का गुनाह कर
 ऐसा पुण्य कर गई माटी
 जनम-जनम के लिए हरी
 हो गई प्राण की वजर घाटी
 पाप-पुण्य की बात न छोड़ो स्वर्ग-नक की करो न चर्चा
 याद किसी की मन में हो तो भगहर वृन्दावन लगता है।
 दो गुलाब के फूल -

तुम्हे देख क्या लिया कि कोई
 सूरत दिखती नहीं पराई
 तुमने क्या छु दिया, बन गई
 महाकाय गीली चौपाई
 कौन करे अब मठ में पूजा, कौन फिराए ठाण मुमरिनी
 जीना हमें भजन लगता है, मरना हमें हवा लगता है।
 दो गुलाब के फूल

उनकी याद हमे आती है

मधुपुर के घनश्याम अगर कुछ पूछे हाल दुखी गोकुल का,
उनसे कहना पथिक कि अब तक उनकी याद हमे आती है ।
बालापन की प्रीति भुलाकर
वे तो हुए महल के वासी,
जपते उनका नाम यहाँ हम
यौवन मे बनकर सन्यासी,
सावन बिना मल्हार बीतता, फागुन बिना फाग कट जाता,
जो भी रितु आती है वृज मे वह बस आसू हो जाती है ।
मधुपुर के घनश्याम -

बिना दिये की दीवट जैसा
सूना लगे उमर का मेला,
सुलगे जैसे गीली लकड़ी
सुलगे प्राण साँझ की बेला,
घूप न भाए, छाँह न भाए, हँसी-खुशी कुछ नहीं सुहाए,
अर्घी जैसे गुजरे पथ से ऐसे आयु कटी जाती है ।
मधुपुर के घनश्याम

पछुमा बन लौटी पुरवाई,
 टिहू-टिहू कर उठी टिटहरी,
 पर न मिराई तनिक हमारे
 जीवन की जलती दोपहरी,
 घर बैठूं तो चैन न आए, बाहर जाऊं भीड़ सताए,
 इतना रोग बढ़ा है ऊघो । कोई दवा न लग पाती है ।
 मधुपुर के घनश्याम

लुट जाए चारात कि जैसे
 लुटी लुटी है हर अभिलाषा,
 थका-थका तन, बुझा बुझा मन,
 मरुथल बीच पथिक ज्यो प्यासा,
 दिन कटता दुर्गम पहाड सा, जनम कैद सी रात गुजरती,
 जीवन वहाँ रुका है आते जहाँ खुशी हर शरमाती है ।
 मधुपुर के घनश्याम

कलम तोड़ते बचपन बीता,
 पाती लिखते गई जवानी,
 लेकिन पूरी हुई न अब तक,
 दो आखर की प्रेम कहानी,
 और न बिसराओ-तरसाओ, जो भी हो उत्तर भिजवाओ,
 स्याही की हर बूद कि अब शोणित की बूद बनी जाती है ।
 मधुपुर के घनश्याम

खिड़की बन्द कर दो

अब सही जाती नहीं यह निर्दयी बरसात—
खिड़की बन्द कर दो !

यह खड़ी बौछार, यह ठंडी हवाओं के झकोरे,
बादलों के हाथ में यह बिजलियों के हाथ गोरे
कह न दें फिर प्राण से कोई पुरानी बात—
खिड़की बन्द कर दो !

वह अकेलापन कि अपनी साँस लगती फाँस जैसी,
कापती पीली शिखा दिखती दिये की लाश जैसी,
जान पड़ता है न होगा इस निशा का प्रात—
खिड़की बन्द कर दो !

या यही वह वक्त मेरे वक्ष में जय शिर छिपाकर,
या वहाँ तुमने तुम्हारी प्रीति है मेरी महावर,
बन गई कालिख तुम्हें पर अब वही सौगात—
खिड़की बन्द कर दो !

अब न तुम वह, अब न मैं वह, वे न मन में कामनाएँ,
 सिर्फ बच्चा पर धरो कुछ अर्थियाँ, कुछ यातनाएँ,
 किसलिए चाहें चढ़े फिर उम्र की धारात—
 खिड़की बन्द कर दो !

रो न मेरे मन, न गीला आँसुओं से वर बिछोना,
 हाथ मत फैला पकटने को लडकपन का खिलौना,
 मेह-पानी में निभाता कौन किसका साथ—
 खिड़की बन्द कर दो !

अब सहा जाता नहीं

अब तुम्हारे बिन नहीं लगता कहीं भी मन—

बताओ क्या करें ?

नींद तक से हो गई है आजकल अनवन—

बताओ क्या करें ?

घूप भाती है न भाती छांव है,

गेह तक लगता पराया गांव है,

और इसपर रात भाती है बहुत बनठन—

बताओ क्या करें ?

चैन है दिन में न कल है रात में,

क्योंकि चिड़-चिड़कर जरा सी बात में,

हर खुशी करने लगी है दिन ब दिन अनशन—

बताओ क्या करें ?

पर्व हो या तीज या त्यौहार हो,

हो शरद, हेमन्त या पतझर हो,

गीत भी, अगीत भी

हो गई हैं सब धुनें इकवारगी वेधुन—
बताओ क्या करूँ ?

तन मचलता है लजीली बांह को,
मन तडपता है अलक की छांह को,
लौटकर फिर आ गया है प्रीति का वचन,—
बताओ क्या करूँ ?

वक्ष जिसपर शिर तुम्हारा था टिका,
होठ जिनपर गीत तुमने था लिखा,
हैं सुलगते आज यूँ छिन-छिन कि ज्यो इंधन—
बताओ क्या करूँ ?

यह उदासी, यह अकेलापन सघन,
यह जलन यह दाह यह उमड़न, घुटन,
अब सहा जाता नहीं यह साँस का ठगन—
बताओ क्या करूँ ?

तुम ही नहीं मिले जीवन में

पीडा मिली जनम के द्वारे, अपयश पाया नदी किनारे
इतना कुछ मिल गया एक बस तुम ही नहीं मिले जीवन में।
हुई दोस्ती ऐसी दुख में
हर मुश्किल बन गई रुबाई,
इतना प्यार जनन कर बैठी
कवौरी ही मर गई जुन्हाई,
वगिया मे न पपीहा बोला, द्वार न कोई उतरा डोला,
सारा दिन कट गया बीनते काँटे उलझ हुए बसन में।
पीडा मिली जनम के द्वारे

कहीं चुरा ले चोर ७ तोई
दर्द तुम्हारा, याद तुम्हारी,
इसोलिए जगकर जीवन-भर
आँसू ने की पहरेदारी,
बरखा गई सुने बिन वशी श्री' मधुमास रहा निरवशी,
गुजर गई हर रितु ज्यो कोई भिक्षुक दम तोड़ दे विजन में।
पीडा मिली जनम के द्वारे

घट भरने को छलके पनघट
 सेज सजाने दोही कलियाँ,
 पर तेरी तलाश में पीछे
 छूट गईं सब रस की गलियाँ,
 सपने खेल न पाए होली, अरमानों के लगी न रोला,
 बचपन भुलम गया पतझर में, यौवन भीग गया सावन में ।

पीड़ा मिली जनम के द्वारे

मिट्टी तक तो रेंदरु जग में
 ककड़ से बन गई खिलौना,
 पर हर चोट व्याह करके भी
 मेरा सूना रहा बिछौना,
 नहीं कही से पाती आई, नहीं कही से मिली बधाई
 सूनी ही रह गई डाल इस इतने फूलो-भरे चमन में ।

पीड़ा मिली जनम के द्वारे

तुम हो हो वह जिसकी खातिर
 निशि-दिन घूम रहो यह तकली,
 तुम हो यदि न मिले तो है सब
 व्यर्थ कताई असली नकली,
 अब तो और न देर लगाओ, चाहे किसी रूप में आओ,
 एक सूत भर की दूरी है बस दामन में और कफन में ।

पीड़ा मिली जनम के द्वारे

बिन धागे की सुई ज़िन्दगी

मेरा जीवन बिखर गया है, तुम चुन लो कचन बन जाऊँ ।

तुम पारम, मैं अयस अपावन,

तुम अमरित, मैं विष की बेली,

तृप्ति तुम्हारी चरणन चेरी,

तृष्णा मेरी निपट सहेली,

तन मन भूखा, जीवन भूखा,

सारा खेत पड़ा है सूखा,

तुम दरसो धनश्याम तनिक तो

मैं अपाढ सावन बन जाऊँ ।

मेरा जीवन बिखर गया है

यश की बनी अनुचरी प्रतिभा,

बिक्री अथ के हाथ भावना,

काम-क्रोध का द्वारपाल मन,

लालच के घर रहन कामना,

अपना ज्ञान न जग का परिचय,

बिना मच का सारा अभितय,

सूत्रधार तुम बनो अगर तो
 मैं अदृश्य दर्शन बन जाऊँ।
 मेरा जीवन बिखर गया है

बिन घागे की सुई जिन्दगी
 सियें न कुछ, बस धुम-धुम जाए,
 कटी पतंग-समान सृष्टि यह
 ललचाए पर हाथ न आए
 रीती भोली, जजर क्या,
 झटपट मौसम, दुस्तर पथा,
 तुम यदि साथ रहो तो फिर मैं
 मुक्तक रामायण बन जाऊँ।
 मेरा जीवन बिखर गया है

बुदबुद तक मिटकर हिलोर डब
 उठा गया सागर अकूल मे,
 पर मैं ऐसा मिटा कि अब तक
 फूल न बना, न मिला धूल मे,
 कब तक और सहूँ यह पीडा,
 अब तो खत्म करो प्रभु! क्रीडा,
 इतनी दो न थकान कि जब तुम
 आओ, मैं दृग खोल न पाऊँ।
 मेरा जीवन बिखर गया है

जीवन नहीं मरा करता है

छिप छिप अश्रु बहाने वालो !

मोती व्यर्थ लुटाने वालो !

कुछ सपनों के मर जाने से जीवन नहीं मरा करता है ।

सपना क्या है ? नयन-सेज पर

सोया हुआ आख का पानी,

शीर टूटना है उसका ज्यों

जागे कच्ची नींद जवानी,

गीली उमर बनाने वालो !

डूबे बिना नहाने वालो !

कुछ पानी के बह जाने से सावन नहीं मरा करता है ।

माला बिखर गई तो क्या है

खुद ही हल हो गई समस्या,

आँसू गर नीलाम हुए तो

समझो पूरी हुई समस्या,

रूठे दिवस मनाने वालो !

फटी बमीज सिलाने वालो !

कुछ दीपों के बुझ जाने से आगिन नहीं मरा करता है ।

खोता कुछ भी नहीं यहाँ पर
 केवल जिल्द बदलती पोथी,
 जैसे रात उतार चादनी
 पहने सुबह धूप की धोती,
 वस्त्र बदल कर आने वालो !
 चाल बदल कर जाने वालो !
 चन्द खिलौनों के खोने से बचपन नहीं मरा करता है ।

कितनी बार गगरियाँ फूटी
 शिकन न पर भाई पनघट पर,
 कितनी बार किशतियाँ झूबी
 चहल-पहल वो ही है तट पर,
 तम की उमर बढ़ाने वालो !
 लो की आयु घटाने वालो !
 लाख करे पतझर कोशिश पर उपवन नहीं मरा करता है ।

लूट लिया भाली ने उपवन
 लुट्टी न लेकिन गंध फूल की,
 तूफानों तक ने छेड़ा पर
 खिड़की बन्द न हुई धूल की,
 नफरत गले लगाने वालो !
 सब पर धूल उड़ाने वालो !
 कुछ मुखड़ों की नाराजी से दर्पन नहीं मरा करता है ।

सारा बाग नज़र आता है

मैंने तो सोचा था तेरी छाया तक से दूर रहूँगा,
चला मगर तो जाना हर पथ तेरे ही घर को जाता है ।

इतने बदले पथ कि जीवन
ही बन गया एक चौरस्ता,
सूखा पथ न कभी जो भेंटा
तूने सुधियो का गुलदस्ता,
जाने यह कौन सा दर्द है, जाने यह कौन सा कर्ज है,
जिसे चुकाने हर सोदागर कपड़े बदल-बदल आता है ।

तुझसे छिपने की कोशिश मे
ओढ़ गुनाह लिया हर कोई,
याद न आती रात मगर जब
आँख न छिप-छिप कर हो रोई
कैसे तुझसे रिश्ता टूटे, कैसे तुझसे नाता छूटे,
मरघट के रस्ते मे भी तो तेरा पनघट मुस्काता है ।

कोई सुमन न देखा जिसमे
 बसी न तेरी गंध श्वास हो,
 कोई आँसू मिला न जिसको
 तेरे अचल की तलाश हो,
 चाहे हो वह किसी रक की, चाहे हो वह किसी राव की,
 त ही तो बनकर तहार हर डोली नहर से लाता है।

जब तक तेरा दर्द नहीं था
 श्वास अनाथ, उमर थी क्वाशी
 खुशियाँ तो हैं दूर, न दुख
 तक से थी कोई रिश्तेदारी,
 लेकिन तेरा प्यार हृदय को जगा गया, उस दिन से मुझको,
 छोटी से छाटी पत्नी मे सारा बाग नज़र आता है।

रीती गागर का क्या होगा

मानव चारी कर तूने कम तो कर दिया बोझ ग्वालिन का,
लेकिन मेरे श्याम बता अब रीती गागर का क्या होगा ?

युग-युग चली उमर की मथनी
तब झलकी दधि में चिकनाई,
पिरा पिरा हर साँस उठी जब
तब जाकर मटकी भर पाई,

एक ककड़ी तेरे कर की
किन्तु न जाने आ किस दिशि से
पलक भारते लूट ले गई
जनम-जनम की सकल कमाई,

पर है कुछ न शिकायत तुझमें, केवल इतना ही बतला दे,
मोती सब चुग गया हूँ तब मानसरोवर का क्या होगा ?

माखा चोरी कर तूने

सजने को तो सज जाती है
मिट्टी यह हर एक रतन से,

शोभा होती किन्तु और ही
मटकी की टटके माखन से,

इस द्वारे से उस द्वारे तक
इस पनघट से उस पनघट तक
रीता घट है बोझ धरा पर
निर्मित हो चाहे कचन से,
फिर भी कुछ न मुझे दुख अपना, चिन्ता यदि कुछ है, तो यह है
वशी धुनी बजाएगा जो उस वशीधर का क्या होगा ?
माखन-चोरी कर तूने

दुनिया रस की हाट, सभी को
खोज यहाँ रस की क्षण-क्षण है,
रस का ही तो भोग जनम है,
रस का ही तो त्याग मरण है,

और सकल धन धूल, सत्य
तो धन है बस नवनीत हृदय का,
वही नहीं यदि पास, बड़े से
बड़ा धनी फिर तो निधन है,
अब न नचेगी यह गूजरिया, ले जा अपनी कुर्ती फरिया,
रितु ही जब रसहीन हुई तो पचरेंग चूनर का क्या होगा ?
माखन-चोरी कर तूने

देख समय हो गया पैठ का,
पय पर निकल पड़ी हर मटकी,

केवल मैं ही निज देहरी पर
सहमी-सकुची, भटकी-भटकी,

पास नहीं जब गो-रस कुछ भी
कैसे तेरे गोकुल घाऊँ ?
कैसे इतनी ग्वालिनियो मे
लाज बचाऊँ अपने घट की,
या तो इसको फिर से भर दे, या इसके सौ टुकड़े कर दे
निर्गुन जब हो गया सगुन, तब इस आढम्बर का क्या होगा ?
माखन चोरी कर तूने

जब तक धी भरपूर मटकिया,
सौ सौ चोर खड़े थे द्वारे,
अनगिन चिन्ताएँ थी मन मे
गेह जड़े थे लाख किवाड़े,

किन्तु कट गई अब हर साँकल,
और हो गई हल हर भुश्किल,
अब परवाह नहीं इतनी भी
नाब लगे किस नदी-किनारे,

सुख-दुख हुए समान सभी पर फिर भी एक प्रश्न बाकी है
चीतराग हो गया मनुज तो, बूढ़े ईश्वर का क्या होगा ?

--

माखन चोरी कर तूने

माँ ! जल भरन न जाऊँ

माँ ! जल भरन न जाऊँ, बाहर छेडे एक पढोसी छोरा ।
भीतर से तो काजर-कोठा, बाहर दीखे गोरा-गोरा—
माँ ! जल भरन न जाऊँ !

जिघर बढाऊँ चरण, उधर ही
साथ लगा छाया सा डोले,
भीड़ देख जा छिपे ग्राह मे,
इकला पाते ही संग हो ले,

तरह-तरह के रूपक रचकर
ऐसा नाच नचाए मन को,
बिना सूत्र के पुतली नाचै,
बिना तार इकतारा बोले,

घट से तट तक, थल से जल तक,
पण कुटी से राजमहल तक, ।
कोई भी पथ नहीं जहाँ यह हेरा-फेरी करे न भौंरा ।
माँ ! जल भरन न जाऊँ !

झुककर करे प्रणाम कभी श्री'
 कभी खड़ा हो तनकर आगे,
 लिख-लिख फेंके पत्र राह मे,
 कभी झटककर अचल भागे,

कभी कहे तू चन्द्र किशोरी,
 कभी कहे तू कली कमल की,
 विध विध जाए मन पहाड़ का
 ऐसे बुने वचन के धागे ।

बोल कि जैसे बेला गमके,
 वस्त्र कि जैसे दपन दमके,
 देखा सुना न पहले मँया । ऐसा झूठा शेखीखोरा ।
 माँ ! जल भरन न जाऊँ ।

जाने किस कुल का यह बेटा,
 कौन न जाने इसकी माता,
 इसी मुहल्ले बसे कही पर
 पता नहीं घर का चल पाता,

जब देखो तब किसी मोड़ पर
 लुका छुपी बरता फिरता है,
 डाँटा कितनी बार मगर माँ !
 शैतानी से बाज न आता,
 कोशिश बर-कर हूँ थक जाती,
 पर पनघट तब पहुँच न पाती,
 अब तू ही वह राह बता जिस राह न रीता रहे सबोरा ।
 माँ ! जल भरन न जाऊँ ।

माँ । मत ऐसे टेर

मा । मत ऐसे टेर कि मेरा तन अकुलाए, मन अकुलाए ।

तू तो दे आवाज वहाँ पर
यहाँ न मुझसे बजे वासुरी,
तू खींचे उस ठीर, चिढ़ाए
यहाँ मुझे हर फूल-पाँखुरी,

तेरी ममता उधर न माने,
रार इधर संग टोली ठाने,
दो टेरो के बीच, बड़े
दुख मे है मिट्टी की बिरादरी,

तेरी कल्लें न तो तू बिगड़े,
जग की सुनू न तो वह भगड़े,
समझ नहीं आता नैया इस तट जाए, या उस तट जाए ।
माँ । मत ऐसे टेर ।

अभी न दिन भी ढला, न कोई
चिड़िया लेने गई बसेरा,

मछा सड़क के बीच पतंगे
लूट रहा है ममय लुटेरा,

अभी दूर है शाम, न लौटी
वन से अपनी कोई गया,
फिर क्यो बार-बार मुझको ही
आने लगा बुलावा तेरा

पर भैया कैसे मैं आऊँ ?
कैसे उन सबको बिसराऊँ ?

मेरे बिना कि जिनके गेह, न बेला खिला, न बादल छाए ।
मा ! मत ऐसे टेर ।

इधर पड़ी इकलौती गुड़िया,
उधर खड़ा वातून खिलोना,
पाँव - तले अघबना घिरौदा,
हाथ उमर का खाली दोना,

चकई हरे, घेरे भौरा,
टेरे भूना, बिलसे डोरी,
फिर तू ही कह आकर तेरी
गोद बहूँ किस तरह बिछोना,

सब का सब निर्माण अधूरा,
कोई भी तो खेल न पूरा,
कैसे हो निस्तार गली से बच आऊँ तो गाँव बुलाए ।
मा ! मत ऐसे टेर ।

सग खेलने निकले थे जो
साथी इस सागर के तट पर,
वे सब अब तक डूब रह हैं
मोती जल में डूब डूबकर,

कोई भोली रही न खाली,
कुछ में शख, कुछो में सीपी,
केवल मैं ही एक न जिसकी
अजलि में नीर भी बूद भर,

निधनता कुछ हर लेने दे,
मोती अँजुरी भर लेने दे,
क्या है ठीक कि कल फिर तू यह खेल खिलाए, या न खिलाए !
माँ ! मत ऐसे टेर !

मैं ही नहीं और भी तो हैं
बेटे तेरे घूल लपेटे,
फिर क्यों घूम-घूमकर तेरी
ममता मुझसे ही आ भेंटे,

मैं राजा बन जाऊँ, वे सब
रक रहे यह ठीक नहीं है
जब हम सबने साथ - साथ
बाँधे हैं कमर उमर के फेंटे,

जो कुछ देना है, सबको दे,
जो कुछ लेना है, सबसे ले,
पाने हुए प्रसाद अकेले भक्ति लजाए, ज्ञान लजाए !
माँ ! मत ऐसे टेर !

माँ ! अब गोद सुला ले

माँ ! अब गोद सुला ले, तेरी लोरी फिर सुनने का मन है !

घूँप ढली, धिर आई सध्या,
उड़ी बाग की सकल चिरैयाँ,
छोड़-छोड़ अबबने धिरोँदे,
लौट गए सब गुड्डे-गुडियाँ,

जितने थे साथी उन सबकी
मौसम के संग आँखें बदली,
अब केवल मैं शेष, और हैं
शेष राह की भूल-भुलैयाँ,

पूरब सूना, पच्छिम सूना,
उत्तर सूना, दक्खिन सूना,
दृष्टि जहाँ तक जाती केवल सूनापन ही सूनापन है ।

माँ ! अब गोद सुला ले !

धनी उठाए महल-दुमहले
निधन की छत नील छपरिया,

फूलन ऊपर छाँह शूल की
माटी के सिर धिरी बदरिया,

जितनी कठपुतलियाँ यहाँ पर
उतने नाटक, उतने परदे,
पर तेरे मृगछोने तुझको
छोड़ गहे किसकी चादरिया,

नभ दुत्कारे, भू दुत्कारे,
ग्राम-नगर हर पत्थर मारे,
जाने कैसा क्षण आया जो दुश्मन सारा हुआ भुवन है ।
मा ! अब गोद सुला ले ।

अनगिन राग सुने रस-भीने
अनगिन तरह बजी शहनाई,
अनगिन वार बिछौना बदला,
अनगिन आँगन रात गँवाई,

हर दुख-दर्द बनाया तकिया,
शाल समझ ओढी बदनामी,
तेरी लोरी सुने बिना पर
जनम-जनम-भर नीद न आई,

घुने घिसे सब पाटी-पाये,
जर्जर हुई मसहरी सारी,
अब तो तेरी गोद छोड़कर और न कोई कहीं शरण है ।

माँ ! अब गोद सुला ले ।

आह ! समय हो गया शयन का
बन्द हुई साँकल हर घर की,
केवल मैं ही खड़ा लगाए
हुए नुमायश थकी उमर की,

जितने सौदागर आए वे
बड़ा दुकानें कब के लौटे
तुझे हिसाब दिए बिन पर मैं
कैसे गठरी छुड़ें सफर की,

किन्तु न अब है जागा जाता
काँप रही ली दिया धुँआता,
जल्दी आँचल बढ़ा, नहीं तो तम से होता गठबन्धन है ।

माँ ! अब गोद सुला ले !

मर्म न जिसका गीता जाने
वेद न कर पाए परिभाषा,
अर्थ खोजते तर्क छिपे सब
ज्यो पानी के बीच बताशा,

आ हर सुबह उचारे जिसको
जा हर शाम पुकारे जिसको
और न कुछ वह एक शब्द 'माँ'
का है यह सब खेल-तमाशा,

चाहे जितना बड़ा धनी हो,
चाहे जितना बड़ा गुनी हो,

जिसके पास न माँ का मन है, वह सबसे ज्यादा निधन है ।

माँ ! अब गोद सुला ले !

माँ ! मत हो नाराज़

माँ ! मत हो नाराज कि मैंने खुद ही मैली की न चुनरिया ।

मैं तो हूँ पिंजरे की मैना,
क्या जानूँ गलियाँ-गलियारे,
तू ही बोली मुबह कि जाऊँ
देखू मेला नदी किनारे,

मैं तो अपनी बिलकुल मोटी-
मोटी घोती मे ही खुश थी
तूने ऐसी रंगी ओढ़नी
जिसे सभीकी आँख निहारे,

फिर किस तरह दोष है मेरा,
फिर क्यों मुझपर गुस्सा तेरा,
पिंजरे का जब द्वार खुला तो भीतर कैसे बैठे बिड़िया ।
माँ ! मत हो नाराज ।

मैला भी मैला कैसा ? पग-
पग पर जहाँ बिछा आकरपेण,

गीत भी, अगीत भी

लाख दुकानें, लाख तमाशे,
लाख नटनटी, लाख प्रदर्शन,

और फूल भी नकली ऐसे
भसली देख जिन्हे शरमाएँ
फिर तू ही बतला अपना मन
कैसे बस मे रखे लडकपन ?

फिर भी मैंने बहुत कसा मन,
चञ्चल दृग पर किया नियन्त्रण,
रेंगा खिलौना देख एक पर खुल ही मन की गई किवरिया ।
माँ ! मत हो नाराज !

बहक गए जब नयन, दीन औ'
दुनिया की ऐसी सुध विसरी,
चुनरी की क्या कहूँ ? याद तक
रही न सिर पर रखी गठरी,

हृदय डूबता गया और मैं
खड़ी डूबती रही धूल मे
जल मे ज्यो धुल जाए चदन,
माखन मे मिल जाए मिसरी,

मिट्टी से सबध हुआ जब
मेलो से अनुराग बढा जब,
तब कैसे सभव बिलकुल बेदाग बनी रह जाय चुनरिया ।
मा ! मत हो नाराज !

मथुरा से काशी तक भटकी,
मलमल से बल्कल तक धाई,
पर बिलकुल बेदाग कही भी
चादर कोई नज़र न आई,

परखे सत महत हज़ारों
जाँचे कलाकार कवि लाखों
लेकिन सबकी गोराई के
नीचे छिपी मिली कजलाई,

ज्ञानी जहाँ ज्ञान संग डूबे
ध्यानी जहाँ ध्यान संग डूबे

उस तट से बिन भीगे घट भर ले कैसे नादान उमरिया ।

माँ ! मत हो नाराज़ ।

चूक हुई सचमुच माँ ! लेकिन
मुझसे ज्यादा दोष उमर का
जिसने बिना बताए ही
दरवाज़ा खोल दिया भीतर का,

तेरी भी यह भूल कि मुझको
भेज दिया उस गाँव अकेले
भरी सभा के बीच जहाँ
जादू चलता है भुकी नज़र का,

जो कुछ हुआ उसे बिसरा दे,
सटी फेंक, बाल सहला दे,

तेरी ममता भी न मिली तो जाने फिर क्या करे गुजरिया ?

माँ ! मत हो नाराज़ ।

मात्र परछाई हूँ

अब मैं तुम्हारे लिए व्यक्ति नहीं
मात्र परछाई हूँ ।
जब तुम्हारे माथे पर रात थी,
पाव तले धरती कठोर,
और सामने असीम घन-अधकार,
तब मैं तुम्हारे लिए दीप था
तुम्हारा क्वारी प्रकृति का पुरुष,
और तुम्हारी प्रश्नवती आँखों का उत्तर ।
लेकिन अब तुम्हारी आँखों में
प्रश्न नहीं—स्वप्न है
पाँवों में कप नहीं—गति है
हाथों में मेरे खत के बजाय
हीरे की अँगूठी है,
सामने सूरज
और पीछे शहनाई है ।
अब मैं तुम्हारे लिए व्यक्ति नहीं
मात्र परछाई हूँ ।

खिड़की खुली

खिड़की खुली,
सावन का पहला भोंका आया,
दो-चार बूँदें साथ लाया,
तन सिहरा,
मन बिखरा,
कमरा सुवास में नहा गया,
पर न जाने क्यों—
झाँखो में भाँसू एक आ गया ।
खिड़की खुली

मोती हूँ मैं

मोती हूँ मैं,
किसी एक सीपी मे बन्द
अधे समुद्र के गभ मे पडा हूँ,
तल के निकट
मगर तट से दूर ।

दिन बीते,
मास बीते,
वष बीते,
मौसम आए गए,
लेकिन मैं वही हूँ
रख गई थी जहाँ मुझे
मुगो पहले
तन्ही सी लहर एक आयु की ।

असह अव अकेलापन,
खोल का सीमित व्यक्तित्व,

व्यर्थ है दपनिका-कान्ति-
तन का वचक कृतित्व ।

ओ मेरे उद्धारक !

पनडुब्बे-गोताखोर ?

इस जल-समाधि से बाहर निकाल मुझे,

ताकि मैं भी देख सकूँ—

तट पर यात्रियों के पद्-चिह्न

जहाजों की कतार,

झाँधी तूफानों का खेल,

और गुंथकर किसी माला में—

सुन सकूँ—

मृत लहरों की वजाय

हृदय का घड़कन सगीत

जीवन की आवाज़ ।

द्व ताद्वैत

हम एक किताब के दो पृष्ठ हैं—
एक मे गुम्फित होकर भी हम दो हैं,
एक सूत्र मे सूत्रित होकर भी हम दो हैं ।
यद्यपि भुक्तपर अकित अतिम वाक्य
तुमपर जाकर पूरा होता है,
और तुमपर अकित पहला वाक्य
मुझसे शुरू होता है,
फिर भी हम दो हैं ।
यद्यपि तुम्हारे अर्थ का सदभ मैं,
और मेरे अर्थ का सदभ तुम हो,
फिर भी हम दो हैं ।
यद्यपि हमारे जिल्दसाज ने मोड़कर
हमे दो से एक किया है,
फिर भी हम दो हैं ।
क्योंकि हम किताब के दो पृष्ठ हैं
और किताब एक पृष्ठ की नहीं होती ।

पायदान

निर्मम पदाघात,
मिट्टी,
धूल,
कीचड़,
सभी कुछ धारण किया वक्ष पर
बिना प्रतिवाद,
(ताकि)
स्वच्छ रहे आंगन,
निरोग रहे कक्ष,
जहाँ पल रहे हैं सपने
जिन्हें कहते हैं भविष्य ।

फिर भी,
मुझे जगह मिली बाहर
देहरी के पास,
जहाँ शायद ही पहुँचे कभी
घर में महकती चमेली की सुवास ।

हरिण और मृगजल

ओ व्यासे हरिण ।
जल की खोज में तू दौड़ा,
जीवन की अन्तिम श्वास तक तू दौड़ा,
रेगिस्तान के इस छोर से उम छोर तक तू दौड़ा ।

और जब आज तू
बिबश निरुपाय
दो बूद जल के बिना
इस जलती रेत पर
तोड़ता है दम जैसे भोर का दिया असहाय—

तब तुझे
यह सत्य जानकर
दुख है, पश्चात्ताप है
कि जिसकी तलाश में,
जिसके सम्मोहन में
तूने यह यात्रा की,

सारी धूप सर से गुज़ार दो,
-यह जल नहीं-भ्रम था ।
रेत के चमकते कणों का
मोहक भुलावा था-
घोखा था, छल था ।

लेकिन, ओ हरिण !

प्यास से पीड़ित अतृप्ति के चरण !
खेद मत कर निज पराजय पर,
दोष मत दे उस जलमाया को,
बल्कि आभार मान उस मिथ्या मोहन का
जिसने तुझे प्यास दी, अतृप्ति दी,
तेरे थके चरणों को गति दी,
यात्रा-अनुरक्ति दी ।
वह भ्रम न होता तो
तू भी किसी कोने में पड़ा पड़ा मर जाता,
पतझर के पात-सा अचीन्हा-
अदेखा ही बिखर जाता ।

सदा तू छला गया,
वचित अतृप्त रहा,
इसलिए तो तू
रुकने की एवज़ में चला-
लपटों अँगारों से भिड़ा,

बीच ही में खो गए हजारों जहा काफिले
 उस असीम काल के मरुस्थल में
 आधी के वेग-सा बड़ा
 और यह जान सका—
 मृग-जल जो भ्रम है
 वह जीवन है, गति है
 जल जो सत्य है
 वह अगति है
 मरण की स्वीकृति है ।

ओ प्यासे हरिण !
 प्यास से पीड़ित अतृप्ति के चरण ।

धनी और निर्धन

ढेर था मिट्टी का
राम्ते पर पड़ा हुआ
त्यक्त-अस्पृश्य ।

निकला एक कुभकार
बोला—

‘मैं हूँ भूख से
पीड़ित अशान्त,
चल मेरे साथ,

तुझे चाक पर चढाऊँगा
और कुछ बना कर तुझे, रोटी बमाऊँगा ।’

ढेर कुछ बोला नहीं
मीन हो लिया उसके साथ
घर जाकर कुटा-पिटा,
धावे म पका,

घोर बाजार में सिलोना बनकर बिका ।

मिट्टा भी तो

भूखे का भोजन जुटाकर मिटा—

क्योंकि वह डर नहीं, श्रम था ।

×

×

×

एक था बादल

हजारों मन पानी का ढेर साय लिए हुए

शीतल-पवित्र,

गुजरा मरुस्थल से ।

प्यास से तड़पती हुई मिट्टी ने कहा—

‘ओ साँवरे ! दो बूद देता जा

पानी के बिना मैं अपाहिज हूँ, बाँझ हूँ

तेरे आगे आँचल पसारती हूँ

खुद को विछाकर तेरे पाँवों पर

धारनी उतारती हूँ ।’

बादल विद्रुप हँसी हँसा

गरजा

और ताना सा मारकर चला गया

जलधारी होकर भी

प्यासे की प्यास और बढ़ा गया—

क्योंकि वह बादल नहीं

पूजीपति अधम था ।

नया हिसाब

एक था मजदूर
जेठ की जलती हुई धूप में
उमने किया
मात्र घण्टे काम
नीचे से ऊपर
ढोई ईंट तमाम
और जब हुई शाम
पाया उसने
रपया एक
और थोड़ी पीने को इकन्ती इना । ।
फुटपाथ की लेकर टेक
रात को सोया अधपेट
लटने को फिर सुबह
पूरा जीवन सग्राम ।

मैंने बिजली के पखे की हवा में
गुदगुदे बिस्तर पर लेटकर

सिर्फ आध घण्टे मे
 लिखी एक कविता
 कविता की भी केवल दस पक्तियाँ
 अखबारो मे छपी
 सजधज के साथ विकी
 देश मे विदेश मे
 यश की मिली फीस
 और फिर ऊपर से आए
 बतौर पारिश्रमिक पूरे रुपये तीस ।

मेरे हर मिनट का मूल्य मिला
 तीस बटा तीस
 और उसकी मेहनत की दर हुई
 एक बटा चार सौ बीस ।

अंतर अपार है
 समझ नहीं आता यह
 जोड़ है कि बाकी है
 गुणा है कि भाग है
 कौन-सा हिसाब है ?
 कौन-सी अवस्था है ?—
 जजर समाज की जजर व्यवस्था है ।

अजलि

दानी ।

तुमने तो बहुत कुछ किया,
विष से लगाकर अमृत तक दिया ।

पर मेरा भाग्य--

मेरी अंजुली मे सचि थी

और मेरी लोभी दृष्टि

तुमने जो दिया,

उसे छोड़,

तुमने जो नहीं दिया-उस पर थी ।

इसलिए तुम्हारा दान

अची हा,

अदेखा ही बिखर गया, बह गया

और मैं निधन का निधन हो रह गया ।

दानी ।

तुमने तो बहुत कुछ किया,

विष से लगाकर अमृत तक दिया ।

पर मेरा भाग्य

गीत

साधो ! हम चौसर की गोटी ।
कोई गोरी, कोई काली, कोई बड़ी, कोई छोटी ॥

इस खाने से उस खाने तक,
चमराने से ठकुराने तक,
सेले काल-खिलाडी, सबकी गद्दे हाथ में चोटी ।
साधो ! हम ॥

कोई पिटकर, कोई बसकर,
कोई रोककर, कोई हँसकर,
सब ही खेलें ढोठ खेल यह चाहे मिले न रोटी ।
साधो ! हम ॥

कभी पट्ट हर कौड़ी आवे,
कभी अचानक पौ पड जावे,
मोर बनाए एक फेंक तो, दूजी हरे लँगोटी ।
साधो ! हम ॥

इक-इक दाँव को इक-इक फदा,
 इक-इक घर है गोरख धधा,
 हर तकदीर यहाँ है जैसे बूकर के मुँह बोटी ।
 साधो ! हम ॥

बिछी विसात जमा जब तक फड,
 तब तक ही सारी यह भगदड,
 फिर तो एक खलोता सबकी बाँधे गठरी मोटी ।
 साधो ! हम ॥

गीत

साधो ! जीवन दुख की धाटी ।

दिस दिस फिरे निसक हाथ मे लेकर जेठ लूकाठी ॥

सुलगें सारे पछी पिंजर,

सुलगें कल्प, सदी, मन्वन्तर,

ऐसी आग लगी है भीषण सोना बचे न माटी ।

साधो ! जीवन ॥

ऊँचाई से उच्च उँगाई,

नीचाई से निच्च निचाई,

इस पर घरी हुई हर काँधे सी सी मन की काठी ।

साधो ! जीवन ॥

पूरब जाग्रो, पच्छिम जाग्रो,

चाहे जहाँ भभूत रमाग्रो,

एक हाथ हर ठौर पोठ पर पल पल मारे साँठी ।

साधो ! जीवन ॥

इक-इक दाव क
इक-इक घर
हर तकदीर यहा

बिछी विसात जमा ज
तब तक ही सारी यह
फिर तो एक खलोता सब

गीत

साधो ! दुनिया दरसन-मेला ।

इस दिसि फूले कमल-केतकी उस दिसि महके बेला ।

साखों परदे, साखो छवियाँ,

एक एक से सुन्दर कृतिर्माँ,

जिधर बढाधो हाथ उधर हो है मिसरी का बेला ।

साधो ! दुनिया • ॥

हँसकर देखो, रोकर देखो,

जगकर देखो, सोकर देखो,

मनगिन खेल-तमाशे लेकिन लगे छदाम न धेला ।

साधो ! दुनिया • ॥

५ भी धाए सो फँस जाए,

-जनम तक निश्चल न पाए,

त ५ की पर जुग-जुग ठेलम-ठेला ।

साधो ! दुनिया • ॥

राजा, रक, गृही, सन्यासी,
 बड़े-बड़े तलवार-विलासी,
 जो भी आए यहाँ गए सब खाली कर-कर भाटी ।
 साधो ! जीवन ॥

क्या सोया है ओढ़ गुदडिया,
 साथ सुला माटी की गुडिया,
 दुनिया तो है अरे आवरे बिन पाटी की खाटी ।
 साधो ! जीवन ॥

गीत

साधो ! दुनिया दरसन-मेला ।

इस दिसि फूले कमल-केतकी उस दिसि महके बेला ।

लाखो परदे, लाखो छविया,

एक एक से सुन्दर कृतियाँ,

जिधर बढ़ाओ हाथ उधर ही है मिसरी का डेला ।

साधो ! दुनिया ॥

हँसकर देखो, रोककर देखो,

जगकर देखो, सोकर देखो,

अनगिन खेल-तमाशो लेकिन लगे छदाम न घेला ।

साधो ! दुनिया ॥

जो भी आए सो फँस जाए,

जनम जनम तक निकल न पाए,

भीड़भाड़ तो दो पल की पर जुग-जुग ठेलम-ठेला ।

साधो ! दुनिया ॥

सब गाहक औ' सब व्यापारी,
 सबके सिर पर गठरी भारी,
 एक तराजू सब को तोले चेली हो या चेला ।
 साधो ! दुनिया ॥

जब तक खुला हुआ है बस्ता,
 सबसे जोड़ प्यार का रिश्ता,
 कुछ भी साथ न जाए रे जब हसा उड़ा अकेला ।
 साधो ! दुनिया ॥

पतझर घर तक आ पहुँचा है

ओ ! उपवन के रसिक मधुवरो गुजन रण-भेरी में बदला
अपना वाग-बहार लूटने पतझर घर तक आ पहुँचा है ।

जिससे नेह लगाकर हमने
अपनी तक से आँख चुराई
पीछे से आगे ताने को
सुद जिसकी पालकी उठाई

हो जाए वदनाम न जग में
कही हमारा साथी इससे
बार बार घायल होकर भी
हमने अपनी चोट छिपाई,

लेकिन वही पड़ोसी अपना आज भूलकर सारे रिश्ते,
प्रेमनगर को लाघ, हमारे घृणानगर तक आ पहुँचा है ।

आ ! उपवन के ॥

जहाँ जली धूनी ऋषियों की
वहाँ धधक्ती आज चिताएँ,

सम्पूर्ण भारत की आत्मा एक है

सीमा पर लडते हुए जवानों ।
तुमसे मेरा कोई रिश्ता नहीं,
जान पहचान नहीं,
तुम मेरे भाई या बन्धु नहीं,
पाम या दूर के साथी नहीं,
नगर ग्रामवासी नहीं,
एक भाषा-भाषी नहीं,
लेकिन जब भी मैंने यह पढा या सुना,
(कि)
तुम अपनी बटिया-सी बेटी को,
चन्दा-सी पत्नी को,
अगले सहालग में
पीले हाथ बरके
समुराल जानेवाली बहन को,
तुम्हारी कुशलता के लिए
हर दूसरे-तीसरे

और मैंने रोते-रोते
 रात के एकांत में प्रभु से प्रार्थना की है
 कि—वह मेरी कलम,
 मेरे गीत,
 और मेरी खुद की बाकी उम्र तुम्हें दे दे !
 मगर ऐसा इसलिए नहीं हुआ है
 कि मैं कवि हूँ,
 भावुक हूँ,
 सामान्य से अधिक संवेदनशील हूँ,
 वरन् इसलिए कि
 व्यक्ति, व्यक्ति होते हुए भी देश है,
 और जाति, धर्म, भाषा की भिन्नता के बाद भी
 सम्पूर्ण भारत की आत्मा एक है ।

सैनिकों का प्रयाण-गीत

माँ ने फिर हमें पुकारा,
जागा फिर देश हमारा,
खोली गंगा की धारा,
खोनी की चटनी बन जाय—जवानों बढ़ो, आगे बढ़ो ।
जय हो हिन्दोस्तान की,
जय हर वीर जवान की ।

हर आँधो है बहन हमारी, भाई हर तूफान है,
बाँहों में फौलाद जडा है, सीना ज्यों चट्टान है,
रोक सकें जो हमें, अभी तक बनी नहीं वे गोलियाँ,
भुक-भुक गए पहाड़ जिस तरफ बढ़ी हमारी टोलियाँ ।
उठो अपना बल तोलो,
तोपों के जबड़े खोलो,
ऐसा रे घावा बोलो—
चाऊ को माऊ याद आय—जवानों बढ़ो, आगे बढ़ो ।
जय हो हिन्दोस्तान की,
जय हर वीर जवान की ।

रक्षा हमको करती है माँ बहनों के सिन्धूर की,
 हर हिन्दू की रोटी की, हर मुस्लिम के तन्दूर की,
 मंदिर अपना, मस्जिद अपनी, अपना हर गुरुदारा है
 और हिमालय तो हमको प्राणों से ज्यादा प्यारा है।
 सब कुछ सब वापस लेंगे,
 दुश्मन का कफन बुनेंगे,
 तिल भर निज भूमि न देंगे,
 शिर हाँ भने यह चला जाय—जवाना बढो, आगे बढो।
 जय हो हिन्दास्तान की,
 जय हर वीर जवान की।

मिट जाते जो मातृभूमि पर बनते वे इतिहास हैं,
 मस्तक धूल चढ़ाने उनकी भुर जाते आकाश हैं,
 धूप उठाती कफन, चंद्रमा बनता दिया मजार पर,
 रक्त उन्ही का रोगन बनकर चढ़ता हर दीवार पर।
 मरने को जीना कर दो,
 मलमल पश्मीना कर दो,
 माँ का सब कर्जा भर दो,
 बगिया खिलो न मुरझाय—जवानो बढो आगे बढा।
 जय हो हिन्दोस्तान का,
 जय हर वीर जवान की।

सौ-सौ चीनी को काफी बस अपना एक जवान है,
हर सैनिक राणा प्रताप है, 'थापा' हर चौहान है,
तेग शिवाजी की फिर से है मचल उठी हर म्यान में,
चगेजो की कद्र बनेगी शायद हिन्दोस्तान में।

बिजली को कवच बनाओ,

मूरज का मुकुट सजाओ,

ऐसी ज्वाला सुलगाओ,

दुश्मन की होली जल जाय—जवानो बढो, आगे बढो।

जय हो हिन्दोस्तान की,

जय हर वीर जवान की।

आजादी कायम रहती है मेहनत से और काम से,
घोर चली जाती है घर से वह गफलत आराम से,
खून पसीने में बदल वह उसका पहरेदार है,
अधिक मुनाफा खाए जो वह काफिर है, गद्दार है।

गद्दारो को दफना दो,

जयचन्दी नस्ल मिटा दो,

घर घर रण-त्रिगुल बजा दो,

कोई न सोता रह जाय—जवानो बढो, आगे बढो।

जय हो हिन्दोस्तान की,

जय हर वीर जवान की।

इतना अपनाव था उन गध के सहजादो मे
कुद कुम्हलाता तो पाटल उदास होता था,
केतकी की जो कही आख जरा नम हाती
रातो उपवन मे हरसिगार नही सोता था ।

एक का दद था हर एक पडोसी का दद
और गुलशन की खुशी थी हरेक गुचे की खुशी,
ऐसे नाजुक से किसी तार मे वे सब थे गूथे
विजलियाँ तक न घुरा पाई वह हमजोल हँसी ।

एक दिन एक हवा आई मगर पच्छिम की
जाने क्या कह गई हर डाल से चुपके-चुपके,
बिन किसी बात भगडने लगे सब पात-कुसुम,
क्यारी-क्यारी मे जहालत के अंगारे घघके,

लड उठा फूल से हर फूल ओ' हर शाख से शाख,
कोपलो तक से अदावत की गध माने लगी,
ऐसे दिन-रात निकाले गए नफरत के जुलूस,
प्यार की लाश कफन तक को छटपटाने लगी ।

पक्ष कहता था कि दक्खिन का हूँ मैं रुपकैवल
मेरी उत्तर के गुलाबो से न बन पाएगी
और गर साथ हमे गूथा गया माला मे
सारी बगिया की हँसी धूल मे मिल जाएगी,

तिरछी कर आख तभी बोल उठी
मेरी चितवन का
मुझको बेल निक
दूर रखना ।

कलगी कर ठीक तभी डाटके गेंदे ने रहा
कम किसी से नहीं पजाब का बेटा हूँ मैं
चपा यूँपो का अरे सिफ है टसू का फूल
गुलमुहर की ही नरम छाँव में लेटा हूँ मैं

फिर तो जो मालती महाराष्ट्र की अजकब चुपथी
गधवेणी की गिरह खालती-सी यूँ बोली
पाम आए न मेरे केतकी गुजरात की यह
वरना दीवाली यह बन जायगी पल में होली।

गज है यह कि वे सब फूल जो इस गुलशन के
सालहा-साल से रहते थे सग भाई से
आज इस बात पर लडते थे कि खुशू उनकी
है अलग ऐसे अलग गीत ज्यों रबाई से

उडते-उडते यह खबर पहुँच गई माली तक
हर किसी डाल से चुन-चुनके हर इक रंग के फूल
उसने तैयार किया एक बड़ा गुलदस्ता
सतबरन चीर कि ज्यों पहन के आई हाँ धूल

अब न बेला ही रहा बेला, न चपा चपा
एक की पखुरी दूजे से सटी थी ऐसी
दायें हो देखो तो लगती थी जुही सिफ जुही
बायें हो देखो तो दिखती थी चमेली जैसी

भिन्न थे रंग मगर आज सभी मिलकर वे
और ही एक नये रंग को जनम देते थे
या कि फिर से न बिछुड़ने को कभी जीवन में
हाथ में हाथ लिए दोस्त कसम लेते थे।

इतना अपनाव था उन गंध के शहजादो मे
कुद कुम्हलाता तो पाटल उदास होता था,
केतकी की जो कही आँख जरा नम होती
रातो उपवन मे हरसिगार नही साता था ।

एक का दद था हर एक पडासी का ददं
और गुलशन की मुशी थी हरेक गुचे की खुशी,
ऐसे नाजुक से किसी तार मे वे सज थे गूँथे
विजलियाँ तक न घुरा पाईं वह हमजोल हँसो ।

एक दिन एक हवा आई मगर पच्छिम की
जाने क्या कह गई हर डाल से चुपके-चुपके,
बिन किसी बात भगडने लगे सज पात-कुसुम,
क्यारी-क्यारी मे जहालत के अंगारे घघक,

लड उठा फूल से हर फूल औ' हर शाख से शाख,
कोपलो तब से अदावत की गंध भाने लगी,
ऐसे दिन-रात निकाले गए नफरत के जुलूस,
प्यार की साश कफन तक को छटपटाने लगी ।

पद्म कहता था कि दक्खिन का हूँ मैं रूपवँवल
मेरी उत्तर के गुलाबो से न बन पाएगी
और गर साय हमे गूँथा गया मासा मे
मारी बगिया की हँसी धूल मे मिल जाएगी,

तिरछी पर छाँस तभी बोल उठी जूही भी
मेरी बितवन मे है बगाल का जादू-टोना,
मुझको बेना यह बिहारो न सनिष भाता है
दूर रसना इसे ढल जाय न मेरा सोता ।

कलगी कर ठीक तभी डाटके गेंदे ने कहा
 कम किसी से नहीं पजाव का वेटा हूँ मैं
 चपा यूँपो का अरे सिफ है टेसू का फूल
 गुलमुहर की ही नरम छाँव मे लेटा हूँ मैं

फिरता जो मालती महाराष्ट्र की अब तक चुपथी
 गधवेणी की गिरह खालती-सी यूँ बोली
 पाम आए न मेरे केतभी गुजरात की यह
 वरना दीवाली यह बन जायगी पल मे होली।

गज है यह कि वे सब फूल जो इस गुलशन के
 सालहा-साल से रहते थे सगे भाई से
 आज इस बात पे लडते थे कि खुशबू उनकी
 है अलग ऐसे अलग गीत ज्यो रुबाई से

उडते-उडते यह खबर पहुँच गई माली तक
 हर किसी डाल से चुन चुनके हर इक रंग के फूल
 उसने तैयार किया एक बड़ा गुलदस्ता
 सतबरन चीर कि ज्यो पहन के आई हो धूल

अब न बेला ही रहा बेला, न चपा चपा
 एक की पखुरी दूजे से सटी थी ऐसी
 दायें हो देखो तो लगती थी जुही सिफ जुही
 बायें हो देखो तो दिखती थी चमेली जैसी

भिन्न थे रंग मगर आज सभी मिलकर वे
 और ही एक नये रंग को जनम देते थे
 या कि फिर से न बिछुड़ने को कभी जीवन मे
 हाथ मे हाथ लिए दोस्त कमम लेते थे।

हम भी गुलदान के यदि एक कुसुम बन जाएं
गघ इस प्रान्त की उस प्रान्त को सह सकती है
हम भी रह सकते हैं यह देश भी रह सकता है
भिन्नता में भी सदा एकता रह सकती है ।

गीत

घरती का जोवन जागे,
दुनिया से दुख सब भागे,
खुशियाँ हो आगे-आगे,
कुटिया महल बन जाय—हलो की फाल तेज करो ।

जिसके हाथ कुदाली उसके हाथों में तकदीर है
दुनिया सारी क्या है—केवल मेहनत की तस्वीर है
घरती ही है अन्नपूर्णा श्री' श्रम ही भगवान है
मदिर-मस्जिद तो मजहब के पड़ो की दूकान है,
दूकानें यह सब टूट,
मानव के बन्धन छूटें,
जी भर कर सब सुख लूटें,
कोई दुखी न रह पाय—हलो की फाल तेज करो ।

तट-पनघट बसी बट सूने, सूनी हर चौपाल है
ऐसी धिरी उदासी जैसे खुशियों की हडताल है

पडे न भाँवर, होय न गीना, सजे न कोई पालकी
 रुठी है किस्मत ज्यो रुठे लडकी सोलह साल की,
 दुखहो की उमर घटा दो,
 आसू का व्याह रचा दो,
 मरघट को दाग बना दो,
 फूलो की श्रुति फिर आय—हलो की फाल तेज करो ।

राज बढा पसे का ऐसा बिके कफन तब लाशो का
 हो नीलाम आस का पानी जैसे टिकट तमाशो का
 कुत्ते जसे मरें, आदमी मरे गटर मे खानो मे
 जुल्मो का यूँ चार सचाई बढ हो गई थानो मे,
 सारे ये ताश बदल दो,
 धरती - आकाश बदल दो,
 परा इतिहास बदल दो,
 कोई कही न बच पाय—हलो की फाल तेज करो ।

कोडे खाकर जिए पसीना पूजो के दरबार मे
 दीपक को डाँटे अधियारा देखो भरे बजार मे
 पालिश करता हुआ बूट पर घूमे सड़को पर बचपन
 बेकारी इस कदर कि कल पटरी पर सोया चन्द्रबदन,
 रम की बरसात बुलाओ,
 प्यासो की प्यास बुझाओ,
 भूखो की भूख मिटाओ,
 अब न गरीबी सही जाय—हलो की फाल तेज करो ।

बदले ज्यो तारीख रोज बदले चेहरे कानूनो के
 गाधीजी बस बने रह गए हैडिंग कुछ मजमूनो के
 ऐसी घोर विषमता फैली, ऐसे घने तने जाले
 इसपर नशा चढ़ा दारू का, उसे जहर तक के लाले,
 धरती को समतल कर दो,
 आँसू गगा जल कर दो,
 खाली हर आँचल भर दो,
 फिर न अधेश कही छाये--हलो की फाल तेज करो ।

जीने का हक बस दिल्ली को सकल देश को फाँसी है
 ऐसा आया वकन कि सूरज जुगनू का चपरासी है
 कोए खाएँ दूध-मलाई, हस बसाएँ चिड़ियाघर
 मालिक बने भिखारी डोले, ठग बैठें सिंहासन पर,
 आधी को पत्र, पढाओ,
 बिजली को बसम दिलाओ,
 ऐसा तूफान उठाओ,
 दिल्ली की निदिया खुल जाय--हलो की फाल तेज करो ।

वेशरम समय शरमा ही जाएगा

बूढ़े अम्बर से मांगो मत पानी
मत टेरो भिक्षुक को कहकर दानी
धरती की तपन न हुई अगर कम तो
सावन का मौसम आ ही जाएगा ।

मिट्टी का तिल तिलकर जलना ही तो
उसका ककड से कचन होना है
जलना है नहीं अगर जीवन मे तो
जीवन मरीज का एक बिछोना है
अगारो को मनमानी करने दो
लपटो को हर शैतानी करने दो
समझौता कर न लिया गर पतझर से
आगन फूलो से छा ही जाएगा ।
बूढ़े अम्बर से

वे हा मौसम को गीत बनाते जो
मिजराब पहनते हैं विपदाओं की
हर खुशी उन्ही को मिल देती है जो
पो जाते हर नाखुशी हवाओं की

चिन्ता क्या जो टूटा हर सनना है
 परवाह नहीं जो विश्व न अपना है
 तुम ज़रा बाँसुरी में स्वर फको ता
 पपिहा दरवाजे गा ही जाएगा ।
 बूढ़े अम्बर से

जो ऋतुओं की तकदीर बदलते हैं
 वे कुछ-कुछ मिलते हैं वीरानों से
 दिल तो उनके होते हैं शवनम के
 सीने उनके बनते चट्टानों से
 हर सुख को हरजाई बन जाने दो,
 हर दुःख को परछाई बन जाने दो,
 यदि ओढ़ लिया तुमने खुद शीश कफन,
 कातिल का दिल धबरा ही जाएगा ।
 बूढ़े अम्बर से

दुनिया क्या है, मौसम की खिड़की पर
 मपनों की चमकीली सी चिलमन है,
 परदा गिर जाए तो निशि ही निशि है
 परदा उठ जाए तो दिन ही दिन है,
 मन के कमरों के दरवाजे खोलो
 कुछ धूप और कुछ छाँधी में डोलो
 शरमाए पाँव न यदि कुछ काँटों से
 देशरम समय शरमा ही जाएगा ।
 बूढ़े अम्बर से

मुक्तक

यह उचटी हुई नींद ये गीली पलकें,
जलती हुई हर साँस यह सूनी-सूनी,
बरखा में किसी पेड़ के नीचे जैसे,
सुलगा के कोई छोड़ गया हो धूनी।

वो रूप वो छवि, और वह मुसकान घनाम,
देखे तो करे झुक के हर इक फूल सलाम,
बिखरे हुए कधो पे वो श्यामल कुतल,
उतरी हो कही जैसे हिमालय पे शाम।

सपने हैं धिरोँदे कि बिखर जाते हैं,
मीसम हैं परिन्दे कि न बँध पाते हैं,
तू किसको बुलाता है खड़ा पानी में,
गुजरे हुए दिन लौट के कब आते हैं।

दम - भर के लिए वक्त ठहर जाता है,
इतिहास का हर पृष्ठ संवर जाता है,

जब प्यार जला देता है आँखों में चिराग,
इन्सान में भगवान नज़र आता है ।

हर स्वप्न है रो - रो के सुलाने के लिए,
हर याद है, धुल - धुल के भुलाने के लिए,
जातो हुई डोली को न आवाज़ लगा ।
इस गाँव में सब आए हैं जाने के लिए ।

हर धार व तलवार बदल जाती है,
सरकार की सरकार बदल जाती है,
जब जाग के करवट है बदलती जनता,
इतिहास की रफ्तार बदल जाती है ।

माथे पे घटागो के पसीना आया,
फूलों को नये ढंग से जोना आया
आँचल को जो खिसका के वो निकले घरसे—
आँखों से हर इक रिंद को पीना आया ।

हर रेशमी बुलबुल - सी चहक उठती है,
हर साँस शराबी - सी बहक उठती है,
जिस रात में खिल जाते हैं दो प्यार के फूल—
सदियों की तवारीख महक उठती है ।

१ रुख चलती हवाओ का बदल जाता है,
कन्दील-सा माहौल मे जल जाता है,
शरमा के झुका लेते है परबत आँखें—
पल्लू जो तेरे सिर से फिसल जाता है ।

होठो से गजल - गीत सभी रुठ गए,
आँखो मे जो मोती थे कही टूट गए,
ओ काली घटा ऐसे यहाँ शोर न कर,
हम कारवाँ से दूर बहुत छूट गए ।

नफरत का मेरे दर्द को अन्दाज न दे,
ये शोर - भरा जहर - मरा साज न दे,
हम थक के बहुत थक के जरा सोए हैं—
ओ दुनिया हमे इस तरह आवाज न दे ।

उन गोरे कपोलो पे वह तिल की शोभा
भौरा कोई सोया हो कँवल पर जैसे,
मेहदी से रची उफ् वह हथेली सुंदर
अगार तिरा दे कोई जल पर जैसे ।

जीवन ने बहा बहता हुआ जल हूँ मैं
तो आके मरण बोला मरुस्थल हूँ मैं,
पर आँख से जब प्यार के आँसू दो गिरे,
कण-कण ये लगा कहने कि बादल हूँ मैं ।

• भुलसे हुए फूलों के अघर मुसकाए,
 बन घूष गई छाव पथिक बिरमाए,
 उसने जो गिरह खोल बिखेरे कुतल,
 सब कहने लगे देखो वो वादल छाए ।

ये गम ये जहर और है पीना कब तक,
 भाँखों में यह आँसू का नगीना कब तक,
 ऐ सहरे - उमर जल्दी से बन जा शब तू
 या इतना बता दे कि है जीना कब तक ।

हमने ही बिठाया तुझे पैमाने पर,
 फिर तुझको ही टेरा है नशा आने पर,
 नफरत से न यूँ देख हमें ऐ साकी !
 कुछ हक है हमारा भी तो मयखाने पर ।

तू जैसे जिलाएगा जिए जाएंगे,
 जो काम कहेगा वो किए जाएंगे,
 जब पीने ही आए हैं तेरे हाथों से—
 तू जहर भी देगा तो पिए जाएंगे ।

जिन्दगी कामयाब हो जाए,
 प्रश्न हर एक जवाब हो जाए,
 तुम जो आँचल में बाँध लो अपने—
 आसू - आँसू गुलाब हो जाए ।

आदम का लहू

मायूस न हो ओ ! मेरे वतन,
यू डूब न ओ ! सूरज की किरन,
मटार भी नहीं मिट पाता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

भरलो चाहे गोदामो मे,
वेचो चाहे बाजारो मे,
चढवादो चाहे सूली पर,
चुनदो चाहे दीवारो मे,
जुल्मो से कहाँ घबराता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

मिट जाती है हर नादिरशाही,
मुड जाते हैं रुख तलवारो के,
ढह जाते हैं गुम्बद महलो के,
भुक जाते हैं ताज पहाडों के,
जब भी अपनी पर आता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

उससे ही है फूलों में रगत,
 उससे ही सुहागिन है धरती,
 उसका ही खिलौना है सूरज,
 उससे ही है रोशन हर वस्ती,
 फिर भी रे ! बहाया जाता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

गांधी बनकर आया वह कभी,
 जागा बनकर सुकरात कभी,
 बोला बनकर मसूर कभी,
 चीखा बनकर फरहाद कभी,
 सौ भेस बदलकर आता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

वह मुसकाया तो बहार आई,
 वह रोने लगा बरसात हुई,
 वह अँगड़ाया तो दिन निकला,
 वह अलसाया तो रात हुई,
 सब आलम में लहराता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

हिन्दू वो नहीं, मुस्लिम वो नहीं,
 इन्सान रे ! बस इन्सान है वह,
 नफरत जो करे शैतान है वह,
 गर प्यार करे भगवान है वह,
 कतरे में समुन्दर लाता है—आदम का लहू, आदम का लहू ।

प्यार विना क्वाँरी हर बहुरिया

बल्कल न ओढ़ गी गुजरिया,
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

मेहदी की महक आय
अभी नरम हाथो से,
रातों की नींद खुले
सखियों की बातों से,

सपने देखे दिन में सिजरिया ।

अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

परियों के जादू का
मंत्र पढ़े अग-अग,
बोल बचन जैसे वहाँ
दूर वजे जल - तरंग,

भूम-भूम जाय घर-डगरिया ।

अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

अनियारे नैना बिन
काजर ही कारे दिखें,
कँगना जो दमकें तो
भोर में सितारे दिखें,

वचपना न छोड़े ढोठ चुरिया ।
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

नव रस नव रग धुरे
पियर-पियर चोली मे,
बदलियाँ ठिठोली करें
अलको की टोली मे,

होठो पै चमके बिजुरिया ।
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

मुरक-मुरक दरपन यूँ
मुसकाए चितवन से,
उत्तर को चले किन्तु
लीटे मन दक्खिन से,

वसी बनी खुद ही जल-मछरिया ।
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

चीवर वह पहने जो
हो न पिया की प्यारी,
मले वह भभूत जिसे
सौत बने बीमारी,

तू तो मेरे होठ की बँसुरिया ।
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

प्रीति की हवेली मे
खिडकी है अनवन की,
यह न खुले तो न मिले
गघ मंदिर मधुवन की,

खिडकी पे लगा नहो किवरिया ।
अभी तो तेरी बारी उमरिया ।

रेशम से ब्याहे या
बल्कल से प्यार करे,
घूल को लपेटे या
फूल से सिंगार करे,

प्यार बिना कदांगी हर बहुरिया ।
अभी तो तेरा बारी उमरिया ।

गीत

सेज पर साधें बिछालो,
आँख में सपने सजालो,
प्यार का मौसम शुभे । हर रोज़ तो आता नहीं है ।

यह हवा, यह रात, यह
एकांत, यह रिमझिम घटाएँ,
यू बरसती हैं कि पड़ित-
मौलवी पथ भूल जाएँ,
बिजलियो से माँग भर लो,
बादलो से सधि कर लो,
उम्र-भर आकाश में पानी ठहर पाता नहीं है ।
प्यार का मौसम

दूध सी साड़ी पहन तुम
सामने ऐसी खड़ी हो,
जित्ना मे साकेत की
कामायनी जैसे मडी हो,

लाज का बल्कल उतारो,
 प्यार का कगन उजारो,
 'कनुप्रिया' पढत न वह 'गीताजलि' गाता नही है ।

प्यार का मौसम

हो गए सौ दिन हवन तब
 रात यह आई मिलन की,
 उम्र कर डाली घुम्राँ जब
 तब उठी डोली जलन की,
 मत लजाओ पास आओ,
 खुशबुओ मे डूब जाओ,
 कौन है चढती उमर जो केश गुंथवाता नही है ।

प्यार का मौसम

है अमरवहक्षण कि जिसक्षण
 ध्यान सब तजकर भुवन का,
 मन सुने सवाद तन का,
 तन करे अनुवाद मन का,
 चाँदनी का फाग खेलो,
 गोद मे सब आग ले लो,
 रोज ही मेहमान घर का द्वार खटकाता नही है ।

प्यार का मौसम

वक्त तो उस चोर नौकर की
तरह से है सयाना,
जो भचाता शोर खुद ही
लूटकर घर का खजाना,

वक्त पर पहरा बिठाओ,

रात जागो औ' जगाओ,

प्यार सो जाता जहाँ भगवान सो जाता वही है ।

प्यार का मौसम "

,

,

ऐसी रात नहीं आती है

फुलवा मले गुलाल दुआरे,
भँववा रस पिचकारी मारे,
बार-बार तो रसिकप्रिया ओ ! ऐसी रात नहीं आती है ।

रोज न होते स्वप्न विवाहित,
रोज न करती प्यास प्रतीक्षा,
रोज न भिक्षुक बनकर तन से
आत्मा लेती है गुरु-दीक्षा,

मत अपने से आँख चुराओ,
मत आचल मे गाठ लगाओ,
बड़ी कठिनता से निधन की प्रीति सयानी हो पाती है ।
बार-बार तो रसिकप्रिया ओ !

सारी उमर बन गई धूनी,
तब आई यह घड़ी प्यार की,
सारे दिन बीने काँटे जब
छाह मिली तब हरसिंगार की,

और प्रतीक्षा अब न कराओ,
 और अँगारो मे न सुलाओ,
 जितना कुछ सह लिया उसी की सुध कर आँख भरी आती है।
 बार-बार तो रसिकप्रिया ओ !

ना ना उधर न शीश घुमाओ,
 चुम्बन तो है मुकुट प्यार का,
 जब तक वह न सजे माथे पर,
 है सिंगार मारा उधार का,
 भौंह न तानो, रार न ठानो,
 मेरी तही हृदय की मानो,
 कभी - कभी होठो से पहले मन की बात सुनी जाती है।
 बार-बार तो रसिकप्रिया ओ !

ऋतु तो आवारा लडकी है
 जाने कब किसकी हो जाए,
 जाने किस घर दिवस गुजारे,
 जाने किस घर रात बिताए,
 मत विश्वास करो मौसम पर
 फागुन की कमउम्र कसम पर,
 हर दिन प्यार नहीं होता है, हर दिन आग नहीं आती है।
 बार-बार तो रसिकप्रिया ओ !

हमारो रँग केसरिया

दुनिया को रंग दुरंग ! हमारो रँग केसरिया ।।

कोई रँगाए चूनर धानी,
काहूकी चोली पै चाँदी को पानी,
ऐसे रंग रँगें पर हम तो रँग गई सारी उमरिया !
हमारो रँग केसरिया ।।

कोई पिया की दिन की सहेली,
मह्वे किसी की रात हथेली,
हर दम साथ रहे पर हम ज्यो बादल के साथ बिजुरिया !
हमारो रँग केसरिया ।।

कोई सजन की अँगुरी की मुंदरी,
कोई बलम की आँखो की पुतरी,
बिन माँगे अघरारस चाखें हम अपने दयाम की बँसुरिया !
हमारो रँग केसरिया ।।

कोई मथुरा-काशी जाए,
कोई मसान में धूनी रमाए,
सारे रस्ते छोड़ चले हम अपने पो की नगरिया ।
हमारो रँग केसरिया ॥

[ह्रमुक पर गाया जानेवाला



